प्रथम अध्याय

मुद्राराक्षस : व्यक्तित्व एवं सृजनशीलता

मुद्राराक्षस : व्यक्तित्व एवं सृजनशीलता

स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रमुख प्रयोगधर्मी नाटककारों में मुद्राराक्षस का नाम महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने अपनी मौलिक प्रतिभा के बल पर साहित्य और रंगमंच में क्रांतिकारी स्थितियाँ उत्पन्न की है। नाटक और रंगमंच के सिवा उपन्यास, कहानी, कविता, समीक्षा आदि साहित्य के अंगों पर सफलता से कलम चलाई है। उनके व्यक्तित्व और सृजनशीलता का परिचय निम्न प्रकार हैं।

1.1 व्यक्तित्व :-

1.1.1 <u>जन्म और नाम</u> :-

21 जून, 1931 ई. स. में, लखनऊ के बेहटा गाँव में मुद्राराक्षस का जन्म हुआ है। उनका असली नाम सुभाषचंद्र आर्य है और `मुद्राराक्षस' उनका उपनाम है। `मुद्राराक्षस' नाम से अधिक प्रसिद्ध होने से उन्हें उनके मूल नाम से पहचाना नहीं जाता ।

1.1.2 <u>परिवार</u> :-

मुद्राराक्षस के पिता `शिवचरणलाल' उत्तर-प्रदेश की लुप्तप्राय प्राचीन लोक-नाट्य परम्परा `स्वाँग' के एकमात्र वयोवृद्ध गायक, अभिनेता तथा निर्देशक थे। पिता से ही मुद्राराक्षस को संगीत निर्भर रंगमंच की प्रेरणा मिली। माता का नाम विद्यावती था। एक भाई प्रकाशचंद्र लिटिल जो चित्रकार है , तो तीन बहने विवाहित हैं।[1]

मुद्राराक्षस की पत्नी का नाम इंदिरा है। रंगमंच के क्षेत्र में नायिका के रूप में उन्हें पत्नी का सहयोग मिलता रहा है। `मरजीवा' की प्रस्तुति में इंदिरा ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर अपनी अभिनय कुशलता का प्रदर्शन किया था।मुद्राराक्षस के दो बेटे हैं, जिनके नाम हैं - रामीशीराब तथा रोमेल।

1.1.3 <u>शिक्षा एवं नौकरी</u> :-

मुद्राराक्षस ने स्नातकोत्तर शिक्षा (एम.ए.) लखनऊ विश्वविद्यालय से प्राप्त की। नौकरी के सिलसिले में मुद्राराक्षस लगभग दो दशक कलकत्ता और दिल्ली में रहे। उन्होंने कई जगह नौकरियाँ की हैं। नौकरी के समय पत्र-पत्रिकाओं में लेखन और सम्पादन करते रहें। उन्होंने कलकत्ता के `ज्ञानोदय' पत्रिका तथा अंग्रेजी साप्ताहिक `अणुव्रत' , `जीरो', `साहित्य बुलेटिन', `बेहतर' का - सम्पादन किया है। सन् 1963 में `ऑल इंडिया रेडिओ ` नई दिल्ली से सलग्न रहे। सन् 1968 में `अखिल भारतीय आकाशवाणी कर्मचारी महासंघ ` के अध्यक्ष रहे। सन् 1976 में आकाशवाणी के सम्पादक पद से इस्तीफा दिया। इसके अतिरिक्त वे ``सोसाइटी ऑफ सेल्यूलाइड आर्टस`', लखनऊ के अध्यक्ष रहे। संस्कृति मंडली का अध्यक्ष पद भी उन्होंने निभाया है ।

1.1.4 <u>लेखनकला तथा निर्देशन</u> :-

साढ़ेतीन दशक मुद्राराक्षस लेखनकला में रहे। उनके साहित्य में शोषक-शोषितों का वर्णन रहा है। उनके साहित्यिक जीवन का आरंभ पत्रकारिता से हुआ। मजदूर आन्दोलन से संबंधित रहने से उसका प्रभाव उनके साहित्य पर भी पड़ा। फिर `युनिअन आन्दोलन ` लेखन की प्रेरणा बनी।

मुद्राराक्षस नाट्यकला में राष्ट्रीय फेलो रह चुके हैं। वे एक अच्छे अभिनेता के साथ कुशल निर्देशक भी थे। अनेक नाटकों के निर्देशक एवं रंग-शिविरों के संचालक के रूप में मुद्राराक्षस ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की लंबी कविता `कुआनो नदी' पर आधारित रंग-प्रस्तुति के निर्देशन में वे सफलता

प्राप्त कर चुके हैं। अपने लिखे नाटकों की प्रस्तुति में भी मुद्राराक्षस को सफलता मिली है। उन्होंने सन् 1966 में बिना किसी मंच-तकनीशियन की मदद के स्वयं निर्देशन कर `मरजीवा' को प्रस्तुत किया, जो अत्यंत सफल रहा।

1.1.5 अन्य :-

मुद्राराक्षस स्वभाव से घुमक्कड़ तथा अध्ययनशील प्रवृत्ति के थे। उन्होंने दर्शन, समाजशास्त्र, भारतीय वैदिक और संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया है।[2] देश की आम जनता से उन्हें अत्यधिक प्रेम तथा सहानुभूति रही है।इसके साथ रंगीन मछलियाँ, कुत्ते, बिल्लियाँ पालना उनका शौक रहा है।

मुद्राराक्षस को सम्प्रति उत्तर-प्रदेश के लोक संगीत रूपक `जीवनसिंह' के स्वाँग के पुनरुज्जीवन, नवीकरण एवं प्रस्तुति के लिए केन्द्रीय सरकार के सांस्कृतिक विभाग की सिनीयर फेलोशिप प्राप्त हो चुकी है।

जयदेव तनेजा मुद्राराक्षस के नाट्यलेखन के बारे में अपना मत प्रदर्शित करते हैं - ``तथाकथित अभिजात्य और पढ़े-लिखे संस्कारी दर्शक-पाठक से अलग हटकर आम आदमी के लिए आम आदमी का नाटक पेश करने की दिशा में ईमानदारी से हिन्दी में जो कुछ हुआ है उसमें मुद्राराक्षस का विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है।''[3]

मुद्राराक्षस की प्रयोगधर्मिता का दर्शन उनके साहित्य-द्वारा प्राप्त होता है। उनकी रचनाओं में सतत विविधता, विस्तार और एक प्रयोगोन्मुख जागरण दिखाई देता है। उन्होंने अन्याय , अत्याचार और शोषण का विरोध किया है। वे मानवमूल्यों और मानवता के प्रति हमेंशा प्रतिबद्ध रहे हैं।

1.2 सृजनशीलता :-

मुद्राराक्षस बहुमुखी प्रतिभा संपन्न लेखक हैं। उन्होंने नाटक ही नहीं बल्कि उपन्यास, कहानी, कविता, साहित्यिक आलोचना, सामाजिक इतिहास, हास्यव्यंग्य के साथ बालसाहित्य भी लिखा है। इसका मतलब उन्होंने केवल बड़ों के लिए ही लिखा ऐसी बात नहीं तो बालसाहित्य भी लिखा है। उनके लेखन में विचित्रतापूर्ण अभिरुचियों का दर्शन होता है।

मुद्राराक्षस ने अपने साहित्यिक जीवन में निम्न विधाओं पर लेखनी चलाकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है।

1.2.1 <u>उपन्यास</u> -

1) मकबरे

2) मैडेलिन

3) अचला : एक मनःस्थिति

4) भगोड़ा

5) हम सब मंसाराम

6) शोक संवाद

7) मेरा नाम तेरा नाम

8) शांति भंग

9) प्रपंचतंत्र

10) एक और प्रपंचतंत्र

11) दण्डविधान।

1.2.2 <u>कहानी संग्रह</u> -

1) शब्ददंश

2) प्रतिहिंसा तथा अन्य कहानियाँ

3) मेरी कहानियाँ।

1.2.3 <u>नाटक</u> -

1) तिलचट्टा

2) मरजीवा

3) योअर्स फेथफुली

4) तेन्दुआ

5) सन्तोला

6) गुफाएँ

7) मालविकाग्निमित्र और हम

8) घोटाला

9) कोई तो कहेगा

10) सीढ़ियाँ

11) आला अफसर

12) डाकू ।

1.2.4 <u>रेडिओ नाटक</u> :-

1) काला आदमी

2) उसका अजनबी

3) लाइहरोबा

4) सन्तोला : एक छिपकली

5) उसकी जुराब

6) काले सूरज की शवयात्रा

7) विद्रुप

8) अनुत्तरीत प्रश्न ।

1.2.5 <u>बालसाहित्य</u> :-

1) चींटीपूरम के भूरेलाल

2) भारतेन्दु ।

1.2.6 <u>हास्यव्यंग्य संग्रह</u> :-

1) सुनो भाई साधो

2) मथुरादास की डायरी ।

1.2.7 <u>आलोचना</u> :-

1) साहित्य समीक्षा, परिभाषाएँ और समस्याएँ ।

उपर्युक्त किताबों के अलावा भी मुद्राराक्षस ने छोटी-छोटी किताबें लिखी हैं। उन्होंने साहित्य की विविध विधाओं में लेखन करने पर भी केवल नाटक के कारण उन्हें अधिक प्रसिद्धि मिली है।

नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में प्रमुख नाटककारों में मुद्राराक्षस महत्त्वपूर्ण नाटककार हैं। वे एक साथ नाटककार, अभिनेता और निर्देशक रह चुके हैं। उन्होंने अपने लिखे नाटकों में भी अभिनय किया है। जैसे - ``आला अफसर`` में `चोखें` की भूमिका।

असंगत नाट्य परम्परा को सही मायने में पुन : प्रतिष्ठित करने का श्रेय मुद्राराक्षस को ही दिया जाए तो गलत नहीं होगा। मुद्राराक्षस के नाटकों में नएपन और रचनात्मक शक्ति को अनुभव किया जा सकता है।

डॉ.गिरीश रस्तोगी के अनुसार - ``मुद्राराक्षस के पास मार्क्सवादी जीवन-दर्शन है , पाश्चात्य आधुनिक नाटकों-नाटककारों का अध्ययन , चिन्तन और उनके सन्दर्भ में हिन्दी नाटक पर विचार करनेवाली दृष्टि है जिसे उन्होंने अपने नाटकों की भूमिकाओं में पूरे विस्तार और जोर के साथ व्यक्त किया है।``[4]

मुद्राराक्षस के अनेक नाटक असंगत नाट्यशैली के है। उनके नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव दिखाई देता है। उनके असंगत नाटकों का धरातल राजनीतिक, सामाजिक, व्यक्तिवादी तथा मनोवैज्ञानिक भी दिखाई देता है।

गोविन्द चातक ने भी मुद्राराक्षस के नाटकों पर अपना मत व्यक्त किया है - ``आधुनिक हिन्दी नाटककारों में मुद्राराक्षस की अपनी विशिष्ट भंगिमा है। वे एक साथ प्रकृतवाद, अभिव्यंजनावाद, थिएटर आफ क्रूएल्टी और ऐब्सर्ड नाट्य परम्परा से इस कदर प्रभावित दिखाई देते हैं कि सबका एक मिला-जुला रूप उन्हें औरों से अलग ला खड़ा कर देता है। हिंसा, सेक्स, आदिम मानवीय प्रवृत्तियों के प्रति लगाव, आक्रामक स्थितियाँ , उत्पीड़क, सत्ता के प्रति आक्रोश तथा मृत्युबोध, उनके प्रिय विषय कहे जा सकते हैं। साथ ही जीवन और जगत् की विसंगतियों को वे ऐसी स्वैर कल्पना के साथ रूपायित करते हैं जो सनकीपन, अतिरंजना, फंतासी और फार्स के मिले-जुले अनुभवों से घोषित लगती है।``[5]

मुद्राराक्षस ने असंगत नाटकों के साथ नौटंकी में भी काफी सफलता हासिल की है। `डाकू' नौटंकी उनकी अन्तिम साहित्यकृति है। इस नाटक के साथ उन्होंने साहित्य-लेखन समाप्त किया है।

मुद्राराक्षस के नाट्य साहित्य का संक्षिप्त परिचय -

<u>तिलचट्टा</u> :-

सन् 1973 में प्रकाशित मुद्राराक्षस का `तिलचट्टा' नाटक असंगत नाटक है। नाटक में अंकविभाजन न होकर एक ही दृश्यबंध पर खेला गया है। नाटक में देव और केशी जो पति-पत्नी है - मुख्य पात्र है पिंडारी और गौण पात्रों में काला आदमी , पुलिस अफसर, सिपाही, पिंडारी आदि हैं। नाटक में `तिलचट्टा' की भूमिका विशिष्ट अर्थ निर्माण करती है। इस प्रकार सीमित दृश्य और सीमित पात्रों के सहारे नाटक को सफलता से मंचित किया गया है।

`तिलचट्टा' मध्यवर्गीय स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की विषमताओं-विसंगतियों, वैवाहिक जीवन में आनेवाली दरार, आत्मीय सम्बन्धों तथा स्त्री-पुरुष में मौन और तनाव का चित्रण करनेवाला नाटक है। नाटक में स्थितियों की अनिश्चितता चुनौती बन जाती है। यह नाटक मानवीय नियति की त्रासदी को व्यक्त करता है। नाटक देव और केशी के माध्यम से एक विशेष प्रकार की मन:स्थिति एवं शारीरिक स्थितिवाले मध्यवर्गीय स्त्री-पुरुष वर्ग का नाटक है। देव और केशी की मन:स्थिति उलझनपूर्ण है, जो `है और नहीं है' के बीच पेंडूलम की तरह झूलती रहती है। वे अपनी जीवन की व्यर्थता से ऊबकर अपने-आपको समाप्त कर देना चाहते हैं।

`तिलचट्टा' एक वृत्तनाट्य होने से उसमें घटनाएँ सार्वभौम हैं। विजय चौधरी लिखते हैं - ``नाटक में देव और केशी के जिस तथाकथित `ऐतिहासिक मानवीय आधार की खोज का प्रयास' है , वह अंतत : संदिग्ध गंध भर है - संघर्ष से जुड़े हुए एक आदमी की बदबूदार गंध - जिसे केशी संजोकर रखना चाहती है।''[6]

नाटककार ने मानव-मन के भीतर छिपी कुंठाओं का प्रभावशाली अंकन किया है। नाटक में मनुष्य की विवशता और अस्तित्वहीनता के कटु सत्य को दर्शाया है।

मरजीवा :-

सन् 1974 में प्रकाशित `मरजीवा' सन् 1966 में लिखा मुद्राराक्षस का प्रथम असंगत नाटक है। इस नाटक में तीन दृश्यबंध होकर नाटक पाँच अंकों में विभाजित है।नाटक में आदर्श और भूमि मुख्य पात्र होकर आदर्श का बाप, पुलिस अफसर, शिवराज गंधे, पत्रकार, चूहेमार, युवक आदि गौण भूमिका निभाते हैं। `मरजीवा' का अर्थ है - `मरने की इच्छा रखनेवाला ` और अर्थ की दृष्टि से नाटक पूर्णत: सफल है। `मरजीवा' एक साहसी और प्रयोगशील नाटक होने से नाट्यप्रेमियों का ध्यान मुद्राराक्षस ने खींचा। इस नाटक द्वारा मुद्राराक्षस ने मृत्यु से साक्षात्कार तथा सामाजिक निर्णयों की निरर्थकता को प्रस्तुत किया है।

नाटक में आदर्श और भूमि - जो पति-पत्नी है - पढ़े-लिखे बेकार युवा-वर्ग के प्रतिनिधि हैं। उनके सामने एक ओर तो सत्ता के अनैतिक भ्रष्टाचार में शामिल हो जाने का अपरिहार्य निमंत्रण है, दूसरी ओर, मध्यवर्गीय चेतना की नपुंसकता से उपजा हुआ पलायन। मिनिस्टर शिवराज गन्धे और पुलिस अफसर को आपसी सहयोग, आतंकवादी युवक की पुलिस द्वारा हत्या आदि बातें राजनीतिक वातावरण के अंत:सम्बन्धों और सूत्रों को उद्घाटित करती हैं। हर चरित्र अपने आगमन के साथ कथा में एक नया मोड़ देता है। कई घटनाएँ आकस्मिक होती हैं , जिससे कथानक असंगत होता है।

मुद्राराक्षस ने `आकाशभाषित' में नाटक के बारे में लिखा है - ``आज के हमारे समाज में मध्यवर्ग के पढ़े-लिखे लेकिन बेकार युवावर्ग की स्थिति क्या और क्यों है यह केवल नाटकीय घटना ही नहीं बल्कि एक वृत्तात्मक इतिहास भी है। वह इतिहास टाँगने की खूँटी है यह नाटक मरजीवा।------यह नाटक विरोधी भी नहीं है और सही-सही आलोचना या मूल्यांकन भी नहीं। न तो यह व्यवस्था का विरोध करता है और न ही दूरावस्था का

मूल्यांकन। यह या तो कमेन्ट है या फिर सामाजिक परिवेश से आन्तरिक मजबूरियों के कारण कटे हुए कुछ चरित्रों की टूटन।``[7]

इस प्रकार समकालीन परिस्थिति से युवावर्ग की बिगड़ी मानसिक हालात को स्पष्ट किया है, जो जीने के अलावा मरने की इच्छा रखता है।

<u>योअर्स फेथफुली</u> :-

सन् 1974 में प्रकाशित `योअर्स फेथफुली' नाटक सही अर्थ में असंगत माना जाता है। यह नाटक एक अंक में एक दृश्यबंध पर खेला गया है। इस नाटक में कार्यालय के विशिष्ट वर्ग को पात्रों के रूप में अपनाया है। यह नाटक दफ्तरों की नौकरशाही और अमानवीयता को सामने रखता है। नाटक नितान्त भावुकता के साथ सूक्ष्म व्यंग्य प्रस्तुत करता है। नाटक उन नारियों के चरित्रों पर प्रकाश डालता है जो आर्थिक दबाव के कारण कार्यालयों में नौकरी करती हैं। कार्यालय में काम करनेवाली युवती को अफसर के प्रति `फेथफुल' होकर रहने के लिए अपने अहं एवं अपनी आत्मा को मारना पड़ता है।

विजय चौधरी के मतानुसार - ``योअर्स फेथफुली में औपनिवेशिक तंत्र से विरासत में मिली नौकरशाही का माहौल है, जिससे सोचने-समझने के अधिकार से वंचित आदमी की संवेदना लगातार टकराती है।``[8]

नाटक का सबसे बड़ा व्यंग्य यह है कि दफ्तरों में नियमों की पाबन्दी करनेवाले अफसरों का आचरण ही बड़ा घिनौना होता है और वे चाहते हैं कि उनके कर्मचारी शालीनता-पूर्वक निष्ठा से दफ्तरों का काम करें। पति-पत्नी एक ही दफ्तर में काम नहीं कर सकते लेकिन अफसर स्टेनो के साथ कार्यालय में सम्भोग तक कर सकता है।

प्रस्तुत नाटक द्वारा कार्यालयों में काम करनेवाली स्त्रियों के अधिकारी एवं अधीनस्था के सम्भावित काम सम्बन्धों को प्रेक्षक के सामने प्रस्तुत किया है। मुद्राराक्षस के मतानुसार - ``बुद्धिजीविता जब सामाजिक यथार्थ से कट जाती है तो वह एक निर्मम, अमानवीय यान्त्रिकता में बदल जाती है।``[9]

यह नाटक मार्मिक होने से कोरा चमत्कारवादी नहीं लगता। नाटक में व्यंग्यात्मकता के साथ विसंगतियों पर प्रहार किया है।

<u>तेन्दुआ</u> :-

सन् 1995 में प्रकाशित `तेन्दुआ` नाटक असंगत नाटक ही है। यह नाटक दो दृश्यबंधों पर तीन अंकों में खेला गया है। इस नाटक में उच्च वर्गीय तथा निम्न वर्गीय दोनों भूमिकाओं को पात्रों द्वारा प्रस्तुत किया है। `तेन्दुआ` शासन की क्रूरता, लाल-फीताशाही द्वारा शासनतन्त्र एवं जनता का शोषण तथा अमीर परिवार की यौन वासना की भूख का चित्रण करनेवाला नाटक है। यह नाटक उच्च वर्ग की अमानवीयता तथा यौन विकृति के साथ आम जनता के शोषण और घुटन को उजागर करता है। नाटक द्वारा निम्न और उच्च वर्ग की गहरी खाई को प्रस्तुत किया है।

`तेन्दुआ` नाटक के बारे में डॉ सुंदरलाल कथुरिया लिखते हैं - ``आम आदमी की विडम्बित स्थिति और सुविधाभोगी वर्ग की हिंस्त्र पाशविक प्रवृत्ति को अपने नंगे रूप में उजागर करने के कारण `तेन्दुआ` राकेशोत्तर हिन्दी-नाटय-साहित्य की उपलब्धि है।``[10]

यह वस्तुगत प्रयोगों की दृष्टि से आकर्षित करनेवाला नाटक है।इसमें शोषणकारी या दमनकारी शक्तियों के तंत्र को उजागर करने के लिए यौन प्रतीकों का सटीक प्रयोग किया है। निम्न वर्ग को उच्च वर्ग ने जैसे खिलवाड़ बना लिया है। नाटक में जो संघर्ष चित्रित है वह पूरे अभिजात्य वर्ग की दमनकारी , कुत्सित एवं विकृत प्रवृत्तियों से है। उच्च वर्ग के प्रति दर्शक के मन में वितृष्णा उत्पन्न करनेवाला यह नाटक है। एक सघन नाटयानुभूति देने में नाटक समर्थ है।

सन्तोला :-

सन् 1980 में प्रकाशित मुद्राराक्षस का `सन्तोला' नाटक गौण असंगत नाटक माना जाता है। यह नाटक दो अंकों में विभाजित होकर दो दृश्यबंधों पर खेला गया है। इसमें चार पात्रों ने ही आरंभ से अन्त तक भूमिका निभाई है। `सन्तोला` में व्यक्तिपरक अराजक तथा सम्बन्धों के विघटन की समस्या को प्रस्तुत किया है। नाटक में फ्लैशबैक शैली का विशिष्ट प्रयोग किया है। ``सन्तोला एक तरह की लम्बी कविता होकर संवेदनशील प्रयोगपरक नाटक है।``[11]

`सन्तोला' में ग्यारहवी सदी के दीपंकार श्रीज्ञान का ऐतिहासिक संदर्भ दिया है। तिब्बतवाले राजा-भिक्षु ह-खोरल्दे या ज्ञानप्रभ को ओझाओं ने कैद किया था और वही उनकी मृत्यु हुई। उसी गुफा की खोज में आए प्रो . सरन, सन्तोला और सुखबीर गुफा में कैद हो जाते हैं। अंधेरी गुफा में उनका दुनिया से अलग इतिहास बनने लगता है, जो उनकी मृत्यु के साथ वही दफन हो जाता है। मृत्युबोध से उन पात्रों की संवेदन शक्तियाँ विकृत हो जाती हैं और उनकी पशुवत मृत्यु हो जाती है। नाटक के दृश्य और घटना के अनुसार नाटक एक नया प्रयोग प्रस्तुत करता है।

आला अफसर :-

सन् 1977 में प्रकाशित `आला अफसर' एक अनुदीत नौटंकी नाटक है। यह गोगोल के रुसी नाटक `इन्स्पेक्टर जनरल' का हिन्दी रुपांतर है। मुद्राराक्षस ने सीमित पात्रों द्वारा नाटक को मनोरंजक बनाने का प्रयास किया है। प्रस्तुत नाटक में नौटंकी शैली द्वारा `विनोद' का रास्ता अपनाते हुए सामाजिक सत्य तक पहुँचने का सफल प्रयास किया है। समाज में फैली आर्थिक विषमता पर टिप्पणी करने के लिए कोरस का प्रयोग किया है। रंगा द्वारा नाटक तीन दृश्यबंधों पर खेलने का वर्णन किया है। नाटक हास्य-व्यंग्यात्मकता के साथ मनोरंजनात्मक भी है।

मुद्राराक्षस ने स्पष्ट किया है कि - ``आला अफसर बहुत-से सवाल उठाने के बावजूद एक ही दायरे में लौटता हुआ नाटक है जो एक अंदरुनी सच्चाई के बहशीपन को खोलकर भी उस पर एक और मुलम्मा चढ़ाता है जिससे उसके पैने नकूश गोल किये जा सकें।``[12]

`आला अफसर` एक ऐसे चालाक नौजवान क्लर्क की कथा है , जो झुठा `आला अफसर` बनकर मूर्ख चेअरमैन तथा उसके चमचों को ठग लेता है। नाटक द्वारा मुद्राराक्षस ने शासनतंत्र के खोखलेपन और भ्रष्ट चरित्र की गाँठे खोलकर रख दी है।

अतुल वीर अरोड़ा के मतानुसार - ``यह एक ऐसा नाटक है जिसका कथ्य सार्वकालिक सत्यों से जुड़ा हुआ है। इसमें आदमी के स्वभाव , उसके चरित्र , उसकी कुदरत और उसके व्यक्तित्व में लुके-छिपे, सजे-धँसे वे सभी विसंगतिपूर्ण , विकृत और विद्रूपित तत्त्व मौजूद हैं जो किसी भी नाटक में नाटकीयता को जिंदा रखने के लिए कालजयी सिद्ध हो सकते हैं।``[13]

इस प्रकार समकालीन राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के यथार्थ को `आला अफसर` नाटक द्वारा प्रस्तुत किया है।

<u>डाकू</u> :-

सन् 1986 में लिखी `डाकू` नौटंकी मुद्राराक्षस द्वारा लिखित अंतिम साहित्य-कृति है। मुद्राराक्षस ने नौटंकी नाटक में पहली बार फ्लैशबैक शैली का प्रयोग किया है। इसमें पाँच दृश्यबंधों को प्रस्तुत किया है। नाटक में सीमित पात्रों द्वारा अनेक भूमिकाओं को साकार किया है। `डाकू` नौटंकी में प्रामाणिक लोकधर्मी शिल्प का प्रयोग हुआ है। समकालीन शासन के बिगड़े हालात, गरीबों पर अत्याचार, पुलिस द्वारा आक्रांत समाज और डाकू-राजनेता गठबन्धन की घटनाओं से यह नाटक लिखा गया है। औरत की इज्जत पर डाका डालने की अमानवीय घटना को

समाज के सामने रखना आवश्यक था। इस कारण `डाकू` नाटक के यथार्थ को व्यंग्यात्मकता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

मुद्राराक्षस के मतानुसार - ``डाकू नाटक उस वक्त लिखा गया था जब जयप्रकाश नारायण उनसे आत्मसमर्पण करा रहे थे और मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री इस बात से नाराज थे कि यह श्रेय उन्हें क्यों नहीं मिला।``[14]

`डाकू` में एक ऐसा मुख्य चरित्र है , जो गाँव में रहनेवाला सामान्य आदमी है। राजनीति के हथकण्डों से नेता के आगे समर्पण कर उसे डाकू बनने पर मजबूर किया जाता है। फ्लैशबैक शैली द्वारा `डाकू` के जीवन को उजागर किया है। इस प्रकार `डाकू` नौटंकी द्वारा समकालीन राजनीति को उघाडकर रख दिया है।

निष्कर्ष :-

मुद्राराक्षस का व्यक्तित्व बहुमुखी तथा प्रतिभासंपन्न है। घुमक्कड़ तथा अध्ययनशील प्रवृत्ति के मुद्राराक्षस साढ़ेतीन दशक लेखन कार्य करते रहे हैं। मुद्राराक्षस ने अपना साहित्यिक जीवन पत्रकारिता से आरंभ किया और नाट्यकला में राष्ट्रीय फेलो भी रह चुके हैं। लोकसंगीत को मुद्राराक्षस ने पुनरुज्जीवन दिया है। जिस प्रकार मुद्राराक्षस ने नाटकों की प्रस्तुति में निर्देशन, अभिनय तथा गायन किया उसी प्रकार नाट्यलेखन के साथ उपन्यास , कहानी , कविता , बालसाहित्य , इतिहास , आलोचना आदि साहित्यिक विधा में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। उनके व्यक्तित्व और सृजनशीलता के विकास में पिता और पत्नी का काफी सहयोग रहा है। उनकी पत्नी इंदिरा ने नाटकों की प्रस्तुति के समय उनके साथ कुशल अभिनय भी किया है। मुद्राराक्षस को पिता से विरासत में जो गायन-कला प्राप्त हुई उसका इस्तेमाल उन्होंने नौटंकियों की प्रस्तुति में किया है।

मुद्राराक्षस काल्पनिकता की अपेक्षा यथार्थ को स्वीकारना पसंद करते हैं। इसीलिए उनके सभी नाटक यथार्थता को समाज के सामने रखने में सक्षम बने हैं। उनके नाटकों में असंगत शैली के साथ लोकधर्मी शैली

का भी प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने नाट्यलेखन से लेकर प्रस्तुति तक नए-नए प्रयोगों को अपनाया है। इसी कारण उनके सभी नाटक हिन्दी नाटक साहित्य के क्षेत्र में अलग प्रभाव निर्माण करते हैं। कथ्य, शिल्प और रंगमंच की दृष्टि से मुद्राराक्षस का योगदान महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

संदर्भ सूची

1) परिशिष्ट - 1

2) वही

3) जयदेव तनेजा - समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच, पृ . 88

4) डॉ . गिरीश रस्तोगी - समकालीन हिन्दी नाटककार , पृ . 101

5) गोविन्द चातक - आधुनिक हिन्दी नाटक : भाषिक और संवादीय संरचना , पृ . 190

6) संपा. नेमिचन्द्र जैन - नटरंग (विजय चौधरी , ठोस सामाजिक अनुभव से अमूर्त व्यक्ति-संवेदनाओं की ओर लेख) , पृ . 48

7) मुद्राराक्षस - मरजीवा (आकाशभाषित), पृ . 10 , 8

8) संपा.नेमिचन्द्र जैन -नटरंग (विजय चौधरी , ठोस सामाजिक अनुभव से अमूर्त व्यक्ति-संवेदनाओं की ओर लेख) , पृ . 48

9) मुद्राराक्षस - योअर्स फेथफुली (भूमिका), पृ . 14

10) डॉ . सुंदरलाल कथुरिया - प्रसादोत्तर हिन्दी नाटक : आस्वाद के धरातल , पृ . 342

11) मुद्राराक्षस - सन्तोला (पलैप से उदधृत)

12) वही - आला अफसर , पृ - 23

13) संपा . नेमिचन्द्र जैन - नटरंग (अतुल वीर अरोडा , नौटंकी शैली के विस्फोटक उत्थान का नाटक : आला अफसर , लेख), पृ . 73

14) मुद्राराक्षस - डाकू (भूमिका), पृ . 27